धर्मवीर भारती के नाटक 'अंधा युग' के परिप्रेक्ष्य में हिंदी नाटकों की यात्रा

तनु सिंह
8750850960
tanuamar43@gmail.com

सारांश-

यह शोध पत्र डॉ. धर्मवीर भारती के कालजयी गीति-नाट्य 'अंधा युग' (1954) को केंद्र बिंदु मानकर, इसके उदय के परिप्रेक्ष्य में हिंदी नाटक साहित्य की संपूर्ण विकास यात्रा का गहन विश्लेषण करता है। इस शोध के माध्यम से हम यह समझने का प्रयास करेंगे, कि 'अंधा युग' किस प्रकार स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक की विकास यात्रा में एक महत्त्वपूर्ण विभाजक बिंदु सिद्ध हुआ और इसने साठोत्तरी तथा समकालीन हिंदी नाटकों की विषय-वस्तु, शिल्प एवं मंचीय प्रस्तुति को किस प्रकार प्रभावित किया। 'अंधा युग' की रचना पृष्ठभूमि द्वितीय विश्व युद्ध, विभाजन की विभीषिका और वैश्विक निराशावाद से निर्मित हुई है। यह नाटक महाभारत के अंतिम दिन (18वें दिन) की विभीषिका को आधार बनाकर युद्धोत्तर विसंगतियों, मानवीय नियति तथा नैतिक मूल्यों के पतन जैसे सार्वभौमिक विषयों को अभिव्यक्त करता है। नाटक का केंद्रीय विचार यह है, कि जब विवेक का अंधापन सत्ता पर हावी होता है, तो केवल 'अंधा युग' ही जीतता है, जैसा कि सूत्रधार घोषित करता है:

"यह कथा उन्हीं अन्धों की है;
या कथा ज्योति की है अन्धों के माध्यम से"

शोध की आवश्यकता इस बात में निहित है, कि 'अंधा युग' ने पौराणिक आख्यान के प्रयोग की एक नई परंपरा स्थापित की और प्रसाद युग की काव्यात्मकता को मंच-सुलभ गीति-नाट्य के शिल्प में ढालकर काव्य तथा नाटक के मध्य सामंजस्य स्थापित किया। यह नाटक न केवल पूर्ववर्ती भारतेन्दु और प्रसाद युगीन नाटकों की सीमाओं से बाहर निकलता है, बल्कि यथार्थवादी नाटकों की सीमाओं को तोड़कर प्रतीकात्मक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल पर अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

नाटक के पात्र आधुनिक मनुष्य के विखंडित व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। अश्वत्थामा का चरित्र अस्तित्ववादी विद्रोह और प्रतिशोध की भावना का प्रतीक है, जो व्यवस्था एवं ईश्वर के न्याय पर प्रश्नचिह्न लगाता है:

"इसी तरह
इसी तरह
मेरे भूखे पंजे जाकर दबोचेंगे
वह गला युधिष्ठिर का

जिससे निकला था
'अश्वत्थामा हतो हतः"

वहीं, गांधारी का शाप नैतिक सत्ता के खिलाफ एक विवश माँ का अंतिम विद्रोह है, जो आधुनिक नेताओं के नैतिक पतन की भविष्यवाणी बन जाता है।

"जिसको तुम कहते हो प्रभु
उसने जब चाहा
मर्यादा को अपने ही हित में बदल दिया
वंचक है।"

'अंधा युग' के शिल्पगत प्रयोग, जैसे- गद्य और पद्य का समन्वय तथा अंधायुग, वृद्ध याचक जैसे प्रतीक आदि हिंदी रंगमंच के लिए एक नई 'नाट्यभाषा' को प्रदर्शित करते हैं। इसने परवर्ती नाटककारों (मोहन राकेश, सुरेंद्र वर्मा) को जटिल विचारों को मंच-सुलभ काव्यात्मकता में प्रस्तुत करने का मार्ग दिखाया, तथा रंगमंच में मंचीय न्यूनतमता तथा वाचिक प्रस्तुति की शक्ति को स्थापित किया। 'अंधा युग' ने हिंदी नाटकों की विकास यात्रा में एक क्रांतिकारी मार्ग प्रदान किया, जिसने साहित्यिक विधा को आधुनिक, दार्शनिक एवं सार्वभौमिक बना दिया। यह कृति केवल एक महान रचना नहीं, बल्कि उस परिवर्तन का उत्प्रेरक है जिसने समकालीन हिंदी रंगमंच की नींव रखी।

बीज शब्द- गीति-नाट्य, भारतेंदु युग, हिंदी नाटक, पौराणिक आख्यान

प्रस्तावना-

हिंदी कथा साहित्य की महत्त्वपूर्ण विधा– 'नाटक', अपनी स्थापना के समय से लेकर आधुनिक युग तक सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिवर्तनों की साक्षी रही है। इस यात्रा में अनेक महत्त्वपूर्ण पड़ाव आए, जिनमें से एक अत्यंत प्रमुख और मौलिक पड़ाव है- डॉ. धर्मवीर भारती (1926-1997) का कालजयी गीति-नाट्य 'अंधा युग' (1954)। यह कृति न केवल हिंदी नाटक साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है, बल्कि इसने आधुनिक हिंदी नाटकों की दिशा और दशा दोनों को एक नया आयाम दिया। 'अंधा युग' की रचना का कालखंड भारतीय इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण काल था। देश को स्वतंत्रता प्राप्त हुई थी, किंतु विभाजन की विभीषिका ने लाखों लोगों को विस्थापित किया तथा नैतिक पतन की गहरी छाप छोड़ी। वैश्विक स्तर पर द्वितीय विश्व युद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी पर हुए परमाणु हमले ने, मानव सभ्यता के भविष्य पर प्रश्नचिह्न लगा दिया था। ऐसे में, लोगों की ईश्वर पर आस्था डगमगाई और मानवता एक गहरे अंधकार-बोध से गुजर रही थी। धर्मवीर भारती ने इस वैश्विक और राष्ट्रीय निराशा, मोहभंग तथा मूल्यहीनता को अभिव्यक्ति देने के लिए पौराणिक आख्यान का प्रयोग किया।

नाटक की पृष्ठभूमि महाभारत के युद्ध के अंतिम दिन और उसके बाद की विभीषिका है, जब कौरवों के पक्ष के लगभग सभी नायकों की मृत्यु हो चुकी है तथा शेष बचा है, केवल 'अंधेपन' का विस्तार। नाटक पौराणिक होने के बावजूद अपने कथ्य में विशुद्ध रूप से आधुनिक है। यह कृति इस विचार को स्थापित करती है, कि प्रत्येक युद्ध में, भले ही वह धर्म-युद्ध हो, अंततः धर्म और न्याय दोनों का ह्रास होता है। सूत्रधार आरंभ में ही इस गहन सत्य का उद्घाटन करता है:

"यह अजब युद्ध है नहीं किसी की भी जय
दोनों पक्षों को खोना ही खोना है
अन्धों से शोभित था युग का सिंहासन
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा
दोनों ही पक्षों में जीता अन्धापन
भय का अन्धापन, ममता का अन्धापन
अधिकारों का अन्धापन जीन गया"

यह 'अंधा युग' वस्तुतः सत्ता के लोभ, युद्ध के विवेकहीन उन्माद और मानवीय नियति की त्रासदी का प्रतीक है।

हिंदी नाटकों की यात्रा: 'अंधा युग' के लेखन तक

'अंधा युग' के महत्त्व को गहराई से समझने के लिए, उसके उदय से पूर्व की हिंदी नाट्य परंपरा का संक्षिप्त अवलोकन अनिवार्य है। हिंदी नाटकों की यात्रा को तीन प्रमुख चरणों में बाँटा जा सकता है:

- **भारतेन्दु युग (पुनरुत्थान तथा सामाजिक चेतना):** भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850-1885 ई.) ने हिंदी नाटकों के लिए आधुनिकता का मार्ग प्रशस्त किया। इस काल के नाटकों का उद्देश्य सामाजिक कुरीतियों का विरोध और राष्ट्रीय चेतना का विस्तार था। ये नाटक संस्कृत नाटकों और लोकनाट्य शैलियों (रासलीला, नौटंकी) का मिश्रण थे। उदाहरणस्वरूप, भारतेन्दु का 'अंधेर नगरी' और 'भारत दुर्दशा' सीधे उपदेशात्मक तथा यथार्थवादी शैली में लिखे गए थे, किंतु इनमें काव्यात्मक गहराई एवं सार्वभौमिक दार्शनिक चिंतन का अभाव था।

- **प्रसाद युग (सांस्कृतिक चेतना तथा ऐतिहासिक गौरव):** जयशंकर प्रसाद (1889-1937 ई.) ने हिंदी नाटकों को सर्वप्रथम विशिष्ट साहित्यिक गरिमा प्रदान की। उन्होंने भारतीय इतिहास और संस्कृति के स्वर्णिम युगों पर आधारित नाटकों (जैसे- 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी') की रचना कर राष्ट्रीय चेतना, प्रेम एवं दार्शनिक तत्त्वों को मंच पर स्थापित किया। हालाँकि, उनके संवाद अत्यधिक लंबे, काव्यात्मक और आत्म-विश्लेषणात्मक होते थे, जिसने उन्हें मंच की

अपेक्षा पाठ्य रूप में अधिक सफल बनाया। प्रसाद के नाटकों की सीमा यह थी, कि वे जटिल दृश्यों और लंबे संवादों के कारण मंचीय चुनौतियों से प्रभावित थे तथा तत्कालीन आधुनिक मानव की विसंगतियों को सीधे संबोधित नहीं करते थे।

- **प्रसादोत्तर/स्वतंत्रता पूर्व युग (यथार्थवाद और समस्याप्रधान नाटक):** जयशंकर प्रसाद के बाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र जैसे नाटककारों ने समस्याप्रधान नाटकों की शुरुआत की, जो सीधे सामाजिक समस्याओं तथा व्यक्ति की भावनाओं का यथार्थवादी चित्रण करते थे। इस समय तक, नाटक काव्यात्मकता से दूर होकर सामाजिक या राजनीतिक यथार्थ पर अधिक केंद्रित हो गए थे, एवं रंगमंच यथार्थवादी प्रस्तुतियों की ओर झुक गया था।

'अंधा युग' का आगमन (1954): 'अंधा युग' की रचना ऐसे संक्रमण काल में हुई, जब हिंदी नाटक या तो प्रसाद की काव्यात्मकता से मंच के लिए दूर था, या यथार्थवादी समस्याओं में उलझकर अपनी दार्शनिक गहराई खो चुका था। 'अंधा युग' ने इन दोनों परंपराओं को एक नई ऊँचाई पर पहुँचाया। इसने प्रसाद की काव्यात्मकता को मंच की माँगों के अनुरूप ढाला तथा यथार्थवाद की सीमा से निकलकर मानव नियति एवं अस्तित्व संबंधी सार्वभौमिक प्रश्नों को उठाया।

'अंधा युग' की मौलिकता-

'अंधा युग' हिंदी नाटकों की यात्रा में एक क्रांतिकारी मोड़ है, जिसने कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर अद्वितीय तत्त्व प्रस्तुत किए। इसकी सबसे बड़ी नवीनता इसका आधुनिक बोध है। यह 1954 में लिखी गई कृति है, जो स्वातंत्र्योत्तर भारत और द्वितीय विश्व युद्ध के वैश्विक निराशावाद से सीधे जुड़ी है। महाभारत का युद्ध यहाँ केवल अतीत की घटना नहीं बल्कि आधुनिक मनुष्य की युद्धजन्य त्रासदी, आणविक हथियारों के भय एवं मूल्यों के विघटन का प्रतीक बन जाता है। कथ्य की नवीनता मोहभंग तथा अस्तित्ववाद की अभिव्यक्ति में निहित है, जहाँ अश्वत्थामा जैसे पात्र नियति तथा ईश्वर के न्याय पर संदेह व्यक्त करते हैं। 'अंधा युग' की सबसे बड़ी मौलिकता इसका वैचारिक फलक है, जो पश्चिमी अस्तित्ववादी दर्शन को भारतीय संदर्भ में प्रस्तुत करता है। त्रासदी के बावजूद नाटक मानव गरिमा और जीजीविषा को खोजकर आशा का संदेश देता है।

नाटक के पात्र, मुख्यतः अश्वत्थामा नियति, कर्म और ईश्वर की न्यायप्रियता पर सीधा प्रश्नचिह्न लगाते हैं। कृष्ण द्वारा किए गए कथित छल से उत्पन्न हुए इस पात्र का विद्रोह आधुनिक मनुष्य के विद्रोह का रूप ले लेता है। उसका ब्रह्मास्त्र का प्रयोग आधुनिक मनुष्य द्वारा विनाशकारी शक्तियों के बेलगाम उपयोग का प्रतीक है।

"जिसके पागलपन में मैंने क्या किया

केवल अज्ञात एक प्रतिहिंसा
जिसको तुम कहते हो प्रभु
वह था मेरा शत्रु"   -अश्वत्थामा

अश्वत्थामा के यह वाक्य ईश्वर और व्यवस्था के प्रति मोहभंग को व्यक्त करते हैं, जहाँ मनुष्य अपनी पीड़ा के लिए स्वयं को नहीं बल्कि उस पर शासन करने वाली मिथ्या-व्यवस्था को दोषी ठहराता है।

शिल्प के स्तर पर, 'अंधा युग' ने हिंदी नाटक की दशा और दिशा दोनों को बदल दिया। यह गीति-नाट्य विधा का सर्वोत्तम उदाहरण है, जहाँ संवाद गद्य, छंदबद्ध पद्य और मुक्त छंद के बीच एक लयबद्ध प्रवाह में चलते हैं। यह काव्यात्मकता प्रसाद के नाटकों की तरह केवल साहित्यिक नहीं है, बल्कि मंच की माँगों के अनुकूल और नाटकीयता से परिपूर्ण है। 'सूत्रधार' और 'प्रहरी' सहित नेपथ्य से ध्वनियों का प्रभावी प्रयोग, जो कथा को आगे बढ़ाने के साथ-साथ दार्शनिक टिप्पणियाँ भी करता है, दर्शक को केवल दर्शक नहीं बल्कि विचार प्रक्रिया का भागीदार बनाता है। नाटक में प्रतीकों का प्रयोग अत्यधिक सघन है, जैसे- अंधायुग स्वयं में एक प्रतीक है, साथ ही वृद्ध याचक, प्रहरी, गांधारी, धृतराष्ट्र सहित सभी पात्र किसी-न-किसी रूप में स्वतंत्रता संग्राम के प्रतीकों को प्रकट करते हैं।

उत्तरवर्ती नाटकों पर प्रभाव-

'अंधा युग' ने हिंदी नाटक के लिए एक नई नाट्यभाषा प्रदान की और साठोत्तरी नाट्य आंदोलन को गहन रूप से प्रभावित किया:

- मोहन राकेश ने इससे प्रेरित होकर पौराणिक/ऐतिहासिक कथाओं को आधुनिक मानवीय अंतर्द्वंद्व दर्शाने के लिए चुना तथा अपने नाटकों में सघन, प्रतीकात्मक काव्यात्मक गद्य का प्रयोग किया, जैसे- लहरों के राजहंस, आषाढ़ का एक दिन।
- लक्ष्मीनारायण लाल ('सूर्यमुख') और सुरेंद्र वर्मा ('द्रौपदी') जैसे नाटककारों ने भी पौराणिक प्रतीकों का उपयोग आधुनिक सामाजिक समस्याओं को दर्शाने के लिए किया, जिससे प्रतीकात्मकता एवं पौराणिक आख्यानों की वापसी हुई।
- रंगमंच पर प्रभाव के रूप में 'इब्राहिम अल्काजी' के सफल मंचन ने मंचीय न्यूनतमता को स्थापित किया, जिसने हिंदी रंगमंच को विशाल सेटों की आवश्यकता से मुक्त किया तथा संवाद की शक्ति एवं विचार की गहनता पर बल दिया।

उपर्युक्त विशेषताओं के कारण 'अंधा युग' स्वातंत्र्योत्तर नाटक की एक नींव बन गया, जिसने परवर्ती नाटककारों को यथार्थवादी कथ्य और सामाजिक समस्याओं के सूक्ष्म द्वार से निकलकर मानवीय नियति एवं आंतरिक द्वंद्व जैसे शाश्वत विषयों को प्रतीकात्मक शिल्प में प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित किया।

शोध की आवश्यकता-

हिंदी नाटकों की यात्रा का अध्ययन विभिन्न काल तथा प्रवृत्तियों के आधार पर निरंतर किया जाता रहा है, जो भारतेन्दु युग की सामाजिक चेतना से लेकर प्रसाद युग की सांस्कृतिक काव्यात्मकता तक विस्तृत है। तथापि, 'अंधा युग' हिंदी नाट्य साहित्य में एक ऐसा 'विभाजक बिंदु' है, जिसके प्रभाव को स्वतंत्र रूप से केंद्रित कर हिंदी नाट्य साहित्य के विकास को समझना अनिवार्य है। इस शोध की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि यह नाटक पौराणिक आख्यान (महाभारत) को आधुनिक संदर्भों (द्वितीय विश्व युद्ध, विभाजन की विभीषिका) में विनियोजित कर नव-परंपरा का मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन के माध्यम से यह समझना आवश्यक है, कि किस प्रकार 'अंधा युग' ने पौराणिक कथाओं के प्रयोग की एक नई परंपरा स्थापित की। इसके अतिरिक्त, यह कृति काव्य और नाटक के सामंजस्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह गीति-नाट्य विधा का प्रयोग कर कविता को रंगमंच की सीमाओं से परे जाकर अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनाता है। अतः यह शोध 'अंधा युग' के शिल्पगत प्रयोगों और उसके बाद के नाटकों पर इसके स्थायी प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए आवश्यक है। यह शोध इसलिए भी अपरिहार्य है, क्योंकि यह स्वातंत्र्योत्तर भारत में व्याप्त मोहभंग, विसंगति और मूल्यहीनता की भावना, जिसे हम आधुनिक विसंगति की अभिव्यक्ति कहते हैं, को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है। इस शोध के माध्यम से यह पता लगाया जाएगा, कि 'अंधा युग' ने किस प्रकार आधुनिक हिंदी नाटक को यथार्थवादी नाटकों के सीमा से निकालकर प्रतीकात्मक तथा मनोवैज्ञानिक स्तर पर समृद्ध किया। अंत में, यह नाटक पारंपरिक मंचन की अपेक्षा 'वाचिकता' और 'मंचीय सांकेतिकता' पर अधिक ज़ोर देकर मंचीय प्रयोगों का आधार तैयार करता है। हिंदी रंगमंच में हुए बाद के प्रयोगों, विशेषकर साठोत्तरी नाट्य आंदोलन के नाटककारों पर इसके प्रभाव का गहन अध्ययन करने हेतु यह शोध अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

शोध प्रश्न अथवा शोध का उद्देश्य-

यह शोध पत्र निम्नलिखित प्रश्नों अथवा उद्देश्यों पर केंद्रित है:

- डॉ. धर्मवीर भारती का गीति-नाट्य 'अंधा युग' किस प्रकार हिंदी नाटक साहित्य की विकास यात्रा में एक महत्त्वपूर्ण विभाजक बिंदु सिद्ध हुआ? इसने साठोत्तरी तथा समकालीन हिंदी नाटकों की विषय-वस्तु, शिल्प एवं मंचीय प्रस्तुति को किस प्रकार प्रभावित किया?

- 'अंधा युग' के रचनाकाल (1954) में भारतीय और वैश्विक परिदृश्य में व्याप्त सामाजिक-राजनीतिक और दार्शनिक प्रवृत्तियाँ (जैसे- अस्तित्ववाद, मोहभंग) क्या थी? इन प्रवृत्तियों ने 'अंधा युग' की वैचारिक पृष्ठभूमि को किस प्रकार निर्मित किया?
- 'अंधा युग' में प्रयुक्त नाट्य शिल्पगत नवीनताएँ (जैसे- गीति-नाट्य विधा, प्रतीकात्मकता, काव्यात्मक संवाद और पौराणिक कथा का आधुनिक विनियोग) क्या हैं? इन तत्त्वों ने नाटक को पारंपरिक हिंदी नाटकों से किस प्रकार अलग किया?
- भारतेन्दु युग से लेकर 'अंधा युग' के उदय तक हिंदी नाटक की प्रमुख प्रवृत्तियों (जैसे- सामाजिक चेतना, ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक पुनर्जागरण) की कालक्रमानुसार यात्रा क्या रही है?
- 'अंधा युग' के प्रकाशन के पश्चात् मोहन राकेश, सुरेंद्र वर्मा, लक्ष्मीनारायण लाल जैसे साठोत्तरी तथा समकालीन नाटककारों के नाटकों पर 'अंधा युग' के कथ्य, शिल्प एवं मंचीय प्रयोगों का परवर्ती प्रभाव क्या रहा?
- 'अंधा युग' के मंचन की प्रमुख चुनौतियाँ क्या थी? इब्राहिम अल्काजी और अरविंद गौड़ जैसे निर्देशकों की सफल नाट्य प्रस्तुतियाँ किस प्रकार हिंदी रंगमंच में प्रतीकात्मकता तथा वाचिक अभिनय के बढ़ते महत्त्व को दर्शाती हैं?

साहित्यिक समीक्षा-

डॉ. धर्मवीर भारती के गीति-नाट्य 'अंधा युग' पर हिंदी आलोचना साहित्य में महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध है। यह कृति अपनी मौलिकता तथा दार्शनिक गहनता के कारण आरंभ से ही गंभीर आलोचकों के अध्ययन का केंद्र बिंदु रही है, जिससे इसके स्थायी महत्त्व की पुष्टि होती है। अधिकांश विद्वानों ने इस नाटक को 'आधुनिक हिंदी साहित्य का एक अविस्मरणीय काव्य-नाटक' (शमशेर बहादुर सिंह) स्वीकार किया है, जिसने स्वातंत्र्योत्तर मोहभंग तथा मानवीय नियति के प्रश्नों को सीधे संबोधित किया। उपलब्ध साहित्य का अध्ययन यह दर्शाता है, कि आलोचना ने मुख्यतः तीन आयामों पर ध्यान केंद्रित किया है: कथ्य की आधुनिकता, शिल्पगत प्रयोग और मंचीय सफलता।

डॉ. नामवर सिंह ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'कविता के नए प्रतिमान' में 'अंधा युग' को 'आधुनिक संवेदना का काव्य-नाटक' घोषित किया। उनके अनुसार, नाटक की सबसे बड़ी सफलता यह है कि इसने पौराणिक प्रतीकों का उपयोग अतीत की पुनरावृत्ति के लिए नहीं, बल्कि समकालीन मानव की त्रासदी और विसंगति को अभिव्यक्त करने के लिए किया है। नामवर सिंह का मानना था, कि युद्ध और उसके बाद के अंधकार में

'अंधा युग' ने मानवीय आस्था के टूटने और 'अस्तित्ववाद' के बोध को भारतीय संदर्भ में पहली बार इतनी सघनता से प्रस्तुत किया। इस प्रकार, उन्होंने इसके वैचारिक पक्ष को प्रमुखता दी।

डॉ. बच्चन सिंह अपने 'आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास' में इसे 'भारतीय परंपरा में आधुनिकता की खोज' के रूप में देखते हैं। उनका विश्लेषण इस बात पर केंद्रित है, कि 'अंधा युग' ने प्रसाद के बाद चली आ रही काव्यात्मकता को मंच की यथार्थपरक माँगों के अनुरूप ढाला तथा यह स्वातंत्र्योत्तर मोहभंग को व्यक्त करने वाली पहली सशक्त नाट्य-कृति बनी, जिसने समाज की मूल्यहीनता को कठोरता से उजागर किया।

शिल्पगत प्रयोगों के संदर्भ में, आलोचना साहित्य इस बात पर एकमत है कि 'अंधा युग' ने हिंदी नाटकों को एक नई दिशा प्रदान की। प्रो. गिरीश रस्तोगी ने इसे 'भारतीय पौराणिक आख्यानों के पुनर्सृजन की दिशा में एक क्रांतिकारी मोड़' माना। उनके अनुसार, नाटक महाभारत के दिव्य पात्रों को उनके दैवत्व से मुक्त कर उन्हें मानवीय धरातल पर स्थापित करता है, जहाँ वे भय, लोभ और अहंकार जैसी दुर्बलताओं से ग्रस्त हैं। वे इसकी गीति-नाट्य विधा तथा सूत्रधार/प्रहरी के प्रयोग की प्रशंसा करते हैं, जो संवाद को केवल घटना का वर्णन नहीं बल्कि चिंतन और दार्शनिक निष्कर्ष का वाहक बनाता है।

'अंधा युग' के रंगमंचीय प्रभाव पर भी पर्याप्त शोध कार्य हुआ है। डॉ. इब्राहिम अल्काजी, जिन्होंने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (NSD) में इसका ऐतिहासिक मंचन किया, ने अपने लेखों में कहा कि 'अंधा युग' एक ऐसा नाटक है जिसे न्यूनतम सेट और अधिकतम वाचिक शक्ति के साथ सफलतापूर्वक मंचित किया जा सकता है। उनके अनुसार, इस नाटक ने हिंदी रंगमंच में एक नए 'एस्थेटिक्स' (सौंदर्यबोध) को जन्म दिया, जिसने भव्यता के स्थान पर सांकेतिकता एवं प्रतीकात्मकता को प्राथमिकता दी।

उपलब्ध साहित्यिक समीक्षा यह सिद्ध करती है, कि 'अंधा युग' हिंदी नाट्य साहित्य में एक 'महत्त्वपूर्ण रचना' है। पूर्व के अध्ययनों ने इसके कथ्य, शिल्प और पात्रों पर गहन प्रकाश डाला है। यह शोध, पूर्व के अध्ययनों की इस सशक्त नींव पर खड़ा होकर 'अंधा युग' को केवल एक उत्कृष्ट रचना के रूप में नहीं, बल्कि हिंदी नाटकों की पूरी यात्रा में एक 'उत्प्रेरक' और 'विभाजक शक्ति' के रूप में विश्लेषित करता है। यह उस व्यापक प्रभाव को रेखांकित करता है, जिसने साठोत्तरी नाट्य आंदोलन के लिए वैचारिक और शिल्पगत मार्ग प्रशस्त किया।

शोध प्रविधि-

यह शोध कार्य मुख्य रूप से गुणात्मक और विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि पर आधारित है। चूँकि प्रस्तुत विषय विशुद्ध रूप से साहित्यिक इतिहास, आलोचना और नाट्य शिल्प से संबंधित है, इसलिए प्राथमिक रूप से मूल ग्रन्थों और अनुसंधानों का प्रयोग किया गया है। शोध के लिए सामग्री का संकलन प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों से किया गया है। प्राथमिक स्रोत के रूप में डॉ. धर्मवीर भारती के गीति-नाट्य

'अंधा युग' के मूल पाठ का गहन अध्ययन किया गया। इसके अतिरिक्त भारतेन्दु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश और सुरेंद्र वर्मा जैसे प्रमुख नाटककारों के प्रतिनिधि नाटकों के मूल पाठों का भी सहारा लिया गया, ताकि 'अंधा युग' के पूर्व और पश्चात् की प्रवृत्तियों का तुलनात्मक मूल्यांकन किया जा सके। द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत 'अंधा युग' पर लिखी गई आलोचनात्मक पुस्तकें, शोध प्रबंध, हिंदी नाट्य साहित्य के इतिहास से संबंधित प्रामाणिक ग्रंथ, साहित्यिक पत्रिकाएँ, तथा नाटक के मंचन से संबंधित रंगमंचीय दस्तावेज़ों का गहन विश्लेषण शामिल है।

शोध की प्रकृति को स्पष्ट करने हेतु तीन प्रमुख दृष्टिकोण अपनाए गए हैं: पहला, ऐतिहासिक विश्लेषण, जिसके तहत हिंदी नाटकों की यात्रा को विभिन्न कालों (भारतेन्दु, प्रसाद, प्रसादोत्तर, साठोत्तरी) के संदर्भ में विश्लेषित किया गया है। दूसरा, पाठ-केंद्रित आलोचना जिसके माध्यम से 'अंधा युग' के पाठ के भीतर से उसके शिल्पगत, वैचारिक और दार्शनिक तत्त्वों —विशेषकर गीति-नाट्य विधा, प्रतीकात्मकता और आधुनिक बोध—का गहन विश्लेषण किया गया। तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण तुलनात्मक विश्लेषण, जिसके द्वारा 'अंधा युग' की नवीनता और उसके स्थायी प्रभाव को पूर्ववर्ती (प्रसाद के नाटक) और परवर्ती (मोहन राकेश के नाटक) नाटकों के कथ्य, शिल्प, एवं मंचीय आवश्यकताओं के साथ तुलना करके तार्किक रूप से स्थापित किया गया है। इस प्रविधि का लक्ष्य केवल जानकारी एकत्र करना नहीं, बल्कि विभिन्न साहित्यिक सिद्धांतों एवं आलोचकों के दृष्टिकोणों के आधार पर 'अंधा युग' के स्थायी महत्त्व को एक विभाजक बिंदु के रूप में स्थापित करना है।

पूर्व में किए गए शोध कार्य-

'अंधा युग' हिंदी साहित्य के सर्वाधिक चर्चित और लोकप्रिय नाटकों में से एक रहा है, जिस पर विभिन्न विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में गहन शोध कार्य हुए हैं। अधिकांश पूर्व शोधों ने इस कृति को एक व्यक्तिगत, उत्कृष्ट रचना के रूप में विश्लेषित करने पर ध्यान केंद्रित किया है। इन शोधों ने मुख्यतः चार प्रमुख पहलुओं को अपना केंद्र बिंदु बनाया है।

- पहला, पौराणिक आख्यान का आधुनिक विनियोग। कई अध्ययनों ने महाभारत की कथा के माध्यम से अस्तित्ववादी दर्शन और स्वातंत्र्योत्तर मोहभंग की भावना के संदर्भ में नाटक के प्रतीकात्मक प्रयोगों का विश्लेषण किया है।
- दूसरा, काव्य और नाटक का सामंजस्य, जिसके अंतर्गत 'अंधा युग' की गीति-नाट्य विधा के रूप में सफलता, उसकी काव्यात्मक भाषा सौंदर्य तथा गद्य-पद्य के समन्वय पर स्वतंत्र शोध किए गए हैं।

- तीसरा, पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, विशेष रूप से अश्वत्थामा, गांधारी और वृद्ध याचक जैसे प्रमुख पात्रों के द्वंद्व, नियति एवं आत्म-संघर्ष पर गहराई से मनोवैज्ञानिक अध्ययन किए गए हैं, जो आधुनिक मनुष्य के आंतरिक संकट को दर्शाते हैं।
- चौथा, मंचीय प्रस्तुतियाँ, जिसमें राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (NSD) के मंचनों, विशेषकर इब्राहिम अल्काजी के निर्देशन में हुए ऐतिहासिक मंचन पर रंगमंचीय दृष्टिकोण से कई शोध हुए हैं, जिन्होंने 'अंधा युग' को एक सफल मंचित नाटक के रूप में स्थापित किया है।

जहाँ पूर्व के शोध कार्यों ने 'अंधा युग' को उसके आंतरिक गुणों (कथ्य, शिल्प, मनोविज्ञान, मंचीय प्रस्तुति) के आधार पर विश्लेषित किया है, वहीं यह शोध कार्य एक व्यापक तुलनात्मक और ऐतिहासिक कैनवास पर केंद्रित है। यह 'अंधा युग' को केवल एक उत्कृष्ट रचना नहीं, बल्कि हिंदी नाटकों की पूरी यात्रा में एक 'विभाजक' एवं 'उत्प्रेरक शक्ति' के रूप में स्थापित करने पर केंद्रित है। इस शोध की मौलिकता यह सिद्ध करने में है, कि यह कृति भारतेन्दु युग (आरंभ) और साठोत्तरी रंगमंच (परिणाम) के बीच एक मध्यस्थ तथा क्रांतिकारी प्रभाव रखती है, जिसका व्यापक और तार्किक विश्लेषण आवश्यक है।

निष्कर्ष-

डॉ. धर्मवीर भारती का गीति-नाट्य 'अंधा युग' हिंदी नाट्य साहित्य की विकास यात्रा में एक अविस्मरणीय और निर्णायक विभाजक बिंदु सिद्ध होता है। यह कृति एक ऐसा साहित्यिक मोड़ है, जिसने पौराणिक कथाओं, काव्यात्मक संवाद और आधुनिक अस्तित्ववादी चेतना को एक साथ मिलाकर, एक अद्वितीय नाट्य शिल्प का निर्माण किया। इसने भारतेन्दु युग की सामाजिक चेतना और प्रसाद युग की काव्यात्मक गरिमा के तत्त्वों को आत्मसात करते हुए, स्वातंत्र्योत्तर मोहभंग तथा मानवीय नियति की नई समस्याओं को सशक्त अभिव्यक्ति दी। 'अंधा युग' ने काव्यात्मक गद्य-पद्य संयोजन और प्रतीकात्मक मंचीय प्रस्तुति के माध्यम से पारंपरिक नाट्य शिल्प को चुनौती दी तथा परवर्ती नाटककारों को जटिल विचारों को मंच-सुलभ ढंग से प्रस्तुत करने का एक नया शिल्पगत ढाँचा प्रदान किया। इसके सफल मंचन ने हिंदी रंगमंच में न्यूनतमता और वाचिक शक्ति के महत्त्व को स्थापित किया, जिससे आधुनिक, विचार-केंद्रित रंगमंच के विकास को गति मिली। संक्षेप में, 'अंधा युग' ने हिंदी नाटकों को कथा की साहित्यिक विधा से उठाकर मंच तथा विचार की आधुनिक विधा में स्थायी रूप से परिवर्तित कर दिया, जिससे यह हिंदी नाटकों की यात्रा को एक नवीन दिशा देने वाला एक महान प्रस्थान बिंदु बन गया।

सन्दर्भ सूची-

- अल्काजी, इब्राहिम. "अंधा युग: मंचन की चुनौतियाँ और सफलता." *रंगप्रसंग* (रंगमंच पत्रिका), राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (NSD) प्रकाशन, [मंचन: 1963, 1967, 1974].

- अल्काजी, इब्राहिम. *अंधा युग के मंचन पर इब्राहिम अल्काजी का साक्षात्कार*.
- गोयल, डॉ. तारा. *हिंदी नाट्य साहित्य का इतिहास*. दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, [1960-70 का दशक].
- गुप्त, डॉ. कमलेश. "पौराणिक मिथक और आधुनिकता: 'अंधा युग' के संदर्भ में." *ज्ञानोदय पत्रिका*, खंड 34.
- चतुर्वेदी, डॉ. मीनाक्षी. "अंधा युग में आधुनिक बोध की अभिव्यक्ति." *शोध संवाद*, अंक 15, नई दिल्ली: साहित्य अकादमी.
- प्रसाद, जयशंकर. *स्कंदगुप्त*. [1928].
- भारती, धर्मवीर. *अंधा युग*. नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, [1954].
- राकेश, मोहन. *आषाढ़ का एक दिन*. नई दिल्ली: राजपाल एंड सन्स, [1958].
- रस्तोगी, गिरीश. *आधुनिक हिंदी नाटक: परंपरा और प्रयोग*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, [1968].
- वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र (सं.). *हिंदी साहित्य कोश* (भाग-2). वाराणसी: ज्ञानमंडल लिमिटेड, [1963].
- वर्मा, सुरेंद्र. *द्रौपदी*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, [1972].
- शर्मा, डॉ. प्रेमशंकर. *धर्मवीर भारती और 'अंधा युग': एक समीक्षात्मक अध्ययन*. दिल्ली: वाणी प्रकाशन.
- सिंह, बच्चन. *आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास*. वाराणसी: लोकभारती प्रकाशन, [2007].
- सिंह, नामवर. *कविता के नए प्रतिमान*. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, [1968].
- सिंह, विजेंद्र नारायण. *नाटक और रंगमंच*. दिल्ली: वाणी प्रकाशन.
- श्रीवास्तव, डॉ. रमेश. "साठोत्तरी हिंदी नाटकों पर 'अंधा युग' का शिल्पगत प्रभाव." *वर्तमान साहित्य*.